न्यायपालिका के नियंत्रण में हो सीबीआई

त्रिनाथ मिश्रा
पूर्व निदेशक सीबीआई

हर देश का अलग कानून और तंत्र हैं। समाज व स्थानीय अपराध के साथ परंपरा और सिद्धांत भी अलग हैं। इसी पर आधारित देश की जरूरत के लिहाज से वहां जांच, सुरक्षा और खुफिया सुरक्षा एजेंसियां है। अमेरिका में एफबीआई के पास जांच और खुफिया एजेंसी दोनों की जिम्मेदारी है जबकि सीबीआई केवल जांच एजेंसी है। एफबीआई निदेशक की नियुक्ति सीनेट से मंजूरी मिलने के बाद वहां के राष्ट्रपति करते हैं। निदेशक के चयन की लंबी प्रक्रिया होती है और हमारे यहां सरकार करती है। एफबीआई पर वहां की न्यायपालिका की निगरानी होती है और उसी के नियंत्रण में होती है जबकि हमारे यहां सरकार का नियंत्रण है। न्यायालय मामलों की सुनवाई को लेकर जांच से जुड़े पहलुओं पर केवल निर्देश दे सकता है, लताड़ लगा सकता है, दोबारा जांच के लिए कह सकता है। जबकि होना यही चाहिए कि सीबीआई के ऊपर न्यायपालिका की ही जिम्मेदारी हो।

इंग्लैंड में सीबीआई की तरह सीरियस फ्रॉड आफिस है। यह अटार्नी जनरल के अधीन होती है। स्कॉटलैंडयार्ड तो लंदन पुलिस का ही भाग है। उसका कार्य क्षेत्र भी लंदन के बाहर नहीं है। इसी तरह से फ्रांस में स्योरेट नेशनल है। कहने का आशय यह कि हर देश का देश में होने वाले भ्रष्टाचार, आर्थिक अपराध को रोकने का एक तंत्र है। सब अपनी जरूरत के हिसाब से ऐसी राष्ट्रीय एजेंसियों का गठन करते हैं। मसलन लंदन में आईएएस, आईपीएस जैसी व्यवस्था के बजाय सुरक्षा एजेंसी से जुड़े लोग सिपाही के तौर पर ही भर्ती होते हैं। इसके बाद प्रशिक्षण, चयन, प्रोन्नति का उनका अपना तरीका है और इसी आधार पर सिपाही से अधिकारी बनते हैं। लंदन को छोड़ दें तो वहां इंस्पेक्टर जनरल का अधिकारी चीफ कांस्टेबल होता है। कांस्टेबल की तनख्वाह रॉयल आर्मी के अधिकारियों, लेक्चरर, इंजीनियर से अधिक होती है। वहां कांस्टेबल चुना जाना काफी अच्छा माना जाता है। हालांकि

- हर कदम पर ब्यूरो को कोर्ट और मजिस्ट्रेट को सूचित करना पड़ता है
- सीनेट में मंजूरी के बाद अमेरिकी राष्ट्रपति करता है एफबीआई निदेशक की नियुक्ति
- अमेरिका में एफबीआई न्यायपालिका के नियंत्रण में
- इग्लैंड में सीरियस फ्रॉड ऑफिस अटार्नी जनरल के अधीन

अब वहां भारत की देखा-देखी ग्रेजुएट लोगों के लिए अलग चयन प्रक्रिया आरंभ हो गई है। इसी तरह से नीदर लैंड में सिपाही यदि एक निर्धारित समय के बाद कोई प्रमोशन नहीं पाता तो उसे सेवा से ही निकाल दिया जाता है। इसके पीछे माना जाता है कि वह भ्रष्टाचार और मामलों की जांच में सुस्त है। इसी तरह से आस्ट्रेलिया से लेकर जर्मनी, रूस सबकी एजेंसियां अपने हिसाब से चलती हैं।

जहां तक सवाल देश की जांच एजेंसी सीबीआई का है तो वास्तव में इसे न्यायपालिका के नियंत्रण में होना चाहिए। क्योंकि मामला दर्ज होने से लेकर इसे हर मोड़ पर न्यायालय और मजिस्ट्रेट को ही सूचित करना पड़ता है। सीआरपीसी भी यही कहती है। हालांकि जस्टिस जेएस वर्मा ने जनहित याचिका के जरिए देश की जांच एजेंसियों को न्यायालय के प्रति काफी हद तक जवाबदेह बना दिया है लेकिन अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। इसमें कुछ बदलाव भी बेहद जरूरी हैं।

जांच एजेंसी बहुत ही छोटी है। पांच हजार लोगों की इस एजेंसी के पास पूरे देश भर से मामले आते हैं। सरकार और न्यायालय लगातार इसका काम बढ़ा रहे हैं जबकि लोग काफी कम हैं। आप सोचिए मेरठ के वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक के पद से डेपुटेशन में सीबीआई में एसपी बनकर आया था। मेरे अधीन दो उप-पुलिस अधीक्षक थे। यह देखकर हैरान रह गया। क्योंकि इससे अधिक लोग तो मेरठ के एक चौकी इंचार्ज के अधीन स्टाफ था। लेकिन तब सालभर में बमुश्किल दो केस लेते थे। गंभीरता से जांच की जाती थी। इंस्पेक्टर तफ्शीश से तफ्तीश करता था। जरूरत पड़ने पर दिनभर खोमचे लगाकर सूचना हासिल करने में लग जाता था। आज स्टाफ की कमी के चलते ऐसा नहीं किया जा सकता।

सरकार को भी सीबीआई का ख्याल तभी आता है जब परेशानी बड़ी हो जाती है। दरअसल एजेंसी जांच में कोई समस्या नहीं है। समस्या न्यायालय में मामले के परीक्षण, विभागों की रिपोर्ट आदि से शुरू होती है। 37 साल पहले से चल रहा ललित नारायण मिश्रा हत्याकांड में अभी तक निर्णय नहीं हुआ है। लालू प्रसाद यादव से जुड़े चारा घोटाले के तमाम मामले अटके पड़े हैं। इस तरह की स्थितियों से भी जांच एजेंसी को निजात मिलनी चाहिए।